अविभाज्य उत्तरप्रदेश

(पाइनियर तथा स्वतंत्रभारत में प्रकाशित कुछ लेख)

भारतीय संघ के सबसे बड़े राज्य, उत्तर प्रदेश के विभाजन का जो आन्दोलन चल रहा है उसमें राष्ट्र की एकता और हितों से सम्बन्धित व्यापक महत्त्व के प्रश्न सन्निहित हैं। यद्यपि इस आन्दोलन के समर्थकों की संख्या अधिक नहीं है, फिर भी यह अच्छा होगा कि देश की सामान्य जनता, विशेषकर उत्तर प्रदेश की जनता इसके सभी पहलुओं को अच्छी तरह समझ ले। प्रस्तुत लेखों में, जो समय-समय पर लखनऊ के 'स्वतंत्र भारत' में प्रकाशित हुए हैं, इस विषय पर अच्छी तरह प्रकाश डाला गया है। चूंकि राज्य पुनस्संघटन कमीशन इस समय इस मामले पर विचार कर रहा है, अतः आशा है कि इन लेखों को रुचि के साथ पढ़ा जायगा।

पाइनियर लिमिटेड का प्रकाशन,
लखनऊ

१–विभाजन पक्ष–विश्लेषण

संकलित

[मेरठ में राज्य पुनस्संगठन कमीशन के आगामी दौरे ने उत्तर प्रदेश के विभाजन का विवाद फिर उभार दिया है। प्रस्तुत लेख माला में बताया गया है कि यह मांग, अगर मान ली गयी तो, किस प्रकार विभाजनवादी प्रवृत्तियों को प्रोत्साहित करके पूरे देश को कमजोर कर देगी।]

राज्य पुनस्संगठन कमीशन की नियुक्ति ने एक बार फिर भाषावार विभाजन के प्रश्न को चर्चा का प्रमुख विषय बना दिया है। कमीशन के पास विविध सूत्रों पर आधारित नये राज्यों के निर्माण और क्षेत्रीय पुर्नविभाजन के प्रश्न पर भेजे गये स्मृति पत्रों का अम्बार लग गया है। इस सिलसिले में यदा-कदा नहीं बहुधा भावनाओं को उत्तेजित किया गया है और असली समस्याओं को भुला दिया गया है। यही समय है कि देश में बदली हुई हालतों और आर्थिक स्थिति को ध्यान में रख कर पूरी समस्या का उद्वेगरहित होकर अध्ययन किया जाय।

उचित पृष्ठभूमि के लिए हमें अतीत पर सरसरी निगाह डालनी चाहिए। एक इतिहासज्ञ के शब्दों में "ब्रिटिश भारत के प्रान्त ऐसे बेसिलसिले और बेतरतीब बने थे कि उनसे न तो प्रशासकीय सुविधा ही होती थी और न जनता का लाभ ही। ईस्ट इंडिया कम्पनी द्वारा नये इलाकों पर कब्जा होते ही प्रान्तों की स्थापना हो जाती थी। उसमें न भाषा का ध्यान रखा जाता था और न संस्कृति अथवा परम्परा का। परिणामतः उन में से किसी का भी उचित विकास न हो सका।"

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने इस प्रश्न को सन् २० के करीब उठाया और उसने अपनी नीति के प्रमुख सिद्धांतों में से एक यह भी मान लिया कि प्रांतों का भाषा के आधार पर पुर्नविभाजन होना चाहिए। उसने यह मांग बार-बार दोहरायी और अपने (संघटन के) विधान में विभिन्न भाषा-क्षेत्रों से प्रतिनिधि चुनने का नियम बनाया। विभाजन की मांग जोर पकड़ती गयी। ब्रिटिश भारत के शासकों को भी इस मांग के सामने झुकना पड़ा और द्वितीय गोलमेज सम्मेलन के बाद उड़ीसा, सिन्ध और उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्त तीन स्पष्टतया भिन्न भाषा वाली इकाइयों को अलग कर के तीन प्रान्त बना दिये गये। युद्ध

के पहले प्रांतीय स्वराज्य का युग इस प्रकार के विभाजन के अनुकूल था। देश में धार्मिक स्थिरता रही और ब्रिटिश भारत की कांग्रेसी सरकारों को आशा थी कि अनतिदूर काल में ही भाषावार प्रान्त बन जायेंगे।

युद्ध के बाद

उसी समय युद्ध आ गया। कांग्रेसी सरकारों ने शासन भार त्याग दिया। आर्थिक संतुलन उलट गया। उद्योग युद्ध प्रयत्नों में लग गये। अतः आवश्यक वस्तुओं की बेहद कमी पड़ गयी। यह एकदम नयी आर्थिक स्थिति थी और बहुधा विरोधाभासपूर्ण भी लगती थी जो प्रांतों में लोकप्रिय शासन की स्थापना के बाद दिखाई पड़ी। पुराने आर्थिक सिद्धांत चरमरा कर बैठ गये और जीवित रहने के लिए प्रांतों की एक दूसरे पर निर्भरता अनिवार्य हो गयी। संविधान सभा ने बड़े प्रयत्नों से एक ऐसा संविधान बनाया जिसके फलस्वरूप महादेश भारत एक समशील राज्य बन जाय। संविधान में मौलिक अधिकारों की गारण्टी दी गयी, अब किसी के विरुद्ध जाति धर्म, विश्वास या लिंग के कारण पक्षपात नहीं हो सकता। संविधान ने देश में बोली जाने वाली सभी प्रमुख भाषाओं को भी मान्यता दे दी और सबको सम्मानप्रद स्थान दिया गया। इसके बाद देश के किसी भी भाग में किसी भाषा को बोलने वाले अल्प संख्यकों के लिए न्याय न मिलने का प्रश्न रह ही नहीं गया।

इस पृष्ठ भूमि में हमें भाषावार विभाजन या नये राज्यों के निर्माण की समूची समस्या पर विचार करना है कि क्या सन् २० और ३० में इसके समर्थन में दिये गये तर्क अब भी सही हैं और क्या ऐसे राज्यों का निर्माण या वर्तमान राज्यों को और अधिक तोड़ना-फोड़ना संविधान में दिये गये निर्देशक सिद्धांतों को कार्यान्वित करने में सहायक होगा।

इस संबंध में गृह मंत्रालय ने २९ दिसम्बर सन् '५३ के प्रस्ताव में वस्तु-स्थिति का सार रूप में प्रशंसनीय संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया है। प्रस्ताव में कहा गया है:

"इस क्षेत्र की भाषा और संस्कृति का निस्संदेह महत्व है क्योंकि यही उस क्षेत्र की सामान्य जीवन प्रणाली के प्रतिनिधि हैं। परन्तु राज्यों के पुनस्संगठन पर विचार करते समय, अन्य महत्वपूर्ण बातें भी हैं, जिनका ध्यान रखना होगा।

"पहला महत्वपूर्ण विषय है भारत की एकता और सुरक्षा को बनाये रखना और उसे दृढ़तर करना। वित्तीय आर्थिक और प्रशासकीय बातें भी न सिर्फ हर राज्य के दृष्टिकोण से बल्कि पूरे राष्ट्र के लिए भी उतनी ही महत्वपूर्ण हैं।

'भारत ने अपने आर्थिक, सांस्कृतिक एवं नैतिक विकास के लिए एक महान् सुसंगठित योजना का श्रीगणेश किया है। जो परिवर्तन इस राष्ट्रीय योजना को सफलतापूर्वक कार्यान्वित करने में बाधक हों वे राष्ट्र के हित के लिए हानिप्रद ही होंगे।"

पहली बात पहले

स्वतन्त्रता के बाद केन्द्रीय और राज्य सरकारों के सामने अन्न वस्त्र और आवास की तीन समस्याएँ आयीं जिन्हें सर्वोपरि प्राथमिकता देनी पड़ी। इन समस्याओं को अखिल भारतीय पैमाने पर हल करने के लिए विशाल योजनाएं तैयार की गयीं। उन सबका एक दूसरे से सामंजस्य स्थापित करके वह रूप-रेखा बनी जिसे आम तौर पर प्रथम पंचवर्षीय योजना के नाम से जाना जाता है। नदियां, घाटियां, और पर्वत जिन्हें अब तक प्राकृतिक दीवार या दो इकाइयों के बीच की सीमा जाना जाता था अब ऐसे शक्ति स्रोत माने जाने लगे जिनसे सीमा के दोनों ओर की जनता समान रूप से लाभान्वित हो सकती है। कई करोड़ रुपये के लागत के ऐसे प्रयोगों की सफलता के लिए विभिन्न राज्य सरकारों के कार्यों का त्वरित एवं निर्बाध सहयोग अत्यन्त आवश्यक है। युद्ध काल के पहले के युग में तुंगभद्रा योजना को शीघ्र कार्यान्वित करने के अनेक प्रयत्न किये गये। इसमें चार सरकारों का क्षेत्र था। चारों की खींचतान और चढ़ा-ऊपरी के फलस्वरूप तीन पीढ़ियों तक कोई कदम न उठाया जा सका और इस बीच उस इलाके में अकाल बराबर पड़ता रहा। राज्यों की संख्या में वृद्धि विकास योजनाओं के लिए बाधक सिद्ध होती है। इसका यह दृष्टान्त एक नमूना है। और राज्य सरकारों में अपने बूते अकेले इतने विशाल कार्य उठा लेने की सामर्थ्य नहीं। उन दिनों में इस कमी का अनुभव नहीं किया गया क्योंकि पूरे देश में अन्न की कमी नहीं थी और विदेशों से मनचाहा अन्न मंगा लिया जाता था। परन्तु अब परिस्थिति बदल गयी है। अगर पूरे देश को प्रगति करनी है तो अकाल और अभाव के विरुद्ध युद्धकाल जैसी तत्परता से संघर्ष करना है। इस प्रकार पहले पहल यह सिद्धांत गलत साबित हुआ कि जनता की हर बीमारी का इलाज भाषावार प्रान्तों का निर्माण है।

यद्यपि भारत की नीति शक्तिशाली गुटों से अलग रहने की है फिर भी विश्व की स्थिति को देखते हुए दृढ़ और शक्तिसंपन्न सेना का विकास करने की आवश्यकता और बढ़ गयी है। भारत की उत्तरी सीमा के बहुत बड़े अंश का काश्मीर से लेकर आसाम तक विभाजन भी प्रायः स्पष्ट नहीं है, प्रायः ३ हजार

मील लम्बे हमारे विशाल समुद्रतट को एक शक्तिशाली नौसेना द्वारा सुरक्षित रखना है और अल्पवयस्क नभसेना को भी मजबूत बनाना है। ठीक है रक्षा केन्द्रीय सरकार की जिम्मेदारी है लेकिन अगर राज्य वित्तीय दृष्टि से आत्म-निर्भर न रहे तो केन्द्रीय सरकार के साधनों पर इतना बोझ बढ़ जायगा कि रक्षा पर संकट आ जायगा ।

वित्तीय स्थिरता

अंगरेजों के प्रयास ने कुछ विचित्र समस्याएं उत्पन्न कर दी हैं जो अब तक हल नहीं हो सकी हैं। देश में यंत्र प्रशिक्षित व्यक्तियों की बेहद कमी है। पर्याप्त संख्या में लोगों को अभी प्रशिक्षित करना है। इसके कारण प्रशासन को कठिनाई झेलनी पड़ी है। जीवन के हर क्षेत्र में स्तर नीचा होने का कारण भी ऐसे प्रशिक्षित लोगों की कमी है जो जिम्मेदारी संभाल सकें। उच्च स्तर प्राप्त करने में एक-दो पीढ़ी लग सकती हैं। ऐसी पृष्ठभूमि में छोटी इकाइयां बनने से प्रशासकीय कठिनाइयां बढ़ जायेंगी। ऐसे सभी छोटे राज्य बराबर राष्ट्र निर्माणकारी कार्यों के लिए केन्द्र की सहायता मांगने दौड़ते हैं। विधान मंडल, सचिवालय, न्यायालय, आदि के साजो सामान से प्रशासकीय खर्च बढ़ता है और वह खर्च कुछ ऊपर के लोगों पर भी हो जाता है। मंहगा प्रशासन चलाने के लिए जनता को जो कर देने पड़ते हैं उनके बदले में उस अनुपात में उसे लाभ नहीं हो पाता। दूसरी ओर यह प्रमाणित हो चुका है कि एक बड़े राज्य में प्रशासकीय व्यय अपेक्षाकृत कम बैठता है और दरअसल कर भी कम होता है तथा विकास योजनाओं में अधिक रकम लगायी जाती है। उदाहरणार्थ, 'अ' वर्ग के राज्यों में प्रशासकीय व्यय उत्तर प्रदेश में सबसे कम है।

बहुधा यह तर्क दिया जाता है कि बड़ी इकाई में प्रशासन का जनता से सम्पर्क नहीं रह जाता। पुराने जमाने में जब शासक जनता की भाषा नहीं बोलते थे और यातायात तथा संवाद वाहन काफी पिछड़े थे यह बात सही थी कि उनका जनता से निकट संबंध नहीं था। अब इस प्रकार की दलीलें देना एक भूल है। फासला अब समाप्त हो गया है। शासक राज्य के एक सिरे से दूसरे सिरे तक कुछ घंटों के भीतर पहुँच सकता है और सबसे बड़ी बात यह कि वह जनता की ही भाषा बोलता है। अब यातायात समस्या है ही नहीं, बड़े राज्यों में से अधिकांश ने विशाल सड़क यातायात योजनाएं हाथ में ले ली हैं। उत्तर प्रदेश सड़क यातायात में ४॥ करोड़ रुपये से अधिक लगा चुका है और ऐसे मौके पर जब गैरसरकारी पूंजी सड़कों पर चलने वाली गाड़ियों की भयंकर कमी दूर

करने के लिए अग्रसरनहीं हो रही थी सरकार की यह योजना जनता के लिए बरदान सिद्ध हुई है ।

भारत के सब राज्यों में जहां तक आबादी का संबंध है प्राय: ६ करोड़ जनसंख्या वाला उत्तर प्रदेश सबसे बड़ा है पर आबादी के गुंजानपन की दृष्टि से उत्तर प्रदेश का नम्बर सिर्फ चौथा है। अन्य तीन हैं त्रावणकोर-कोचीन, पश्चिमी बंगाल और बिहार। उत्तर प्रदेश के विस्तार के कारण एक बड़ा लाभ यह है कि यहां की जनता को अपने प्रदेश में रहने के लिए ही नहीं बल्कि विस्तार के लिए भी पर्याप्त भूमि मिल गयी है। दूसरे शब्दों में उत्तर प्रदेश में अन्य राज्यों की तरह गुंजान आबादी नहीं है ।

भाषा की समस्या नहीं

उत्तर प्रदेश अकेला राज्य है जो कटुता उत्पन्न करने वाले भाषा संबंधी उस विवाद से अछूता है जिसके कारण मद्रास और बम्बई जैसे अन्य राज्यों में तनातनी आयी है। जनता की आम भाषा हिन्दी है और जो लोग घरों में हिन्दी नहीं बोलते वह भी इसे असानी से समझ लेते हैं। और उत्तर प्रदेश की जन-भाषा ही अब देश की राष्ट्र भाषा होने जा रही है। सिंधु-गंगा घाटी में ही हिन्दू सभ्यता का उद्भव हुआ है और बाद के वर्षों में यहीं हिन्दू और इस्लामी संस्कृतियों का मेल हुआ है ।

भारत के सब राज्यों में उत्तर प्रदेश ही एक ऐसा प्रदेश है जहां बाहरी लोगों को आतिथ्य और स्वागत मिला है और जहां वह उसे अपना घर मानकर यहां के आदि निवासियों के अभिन्न अंग बन कर यहां की जनसंख्या में घुल मिल सके हैं ।

उत्तर प्रदेश की प्राकृतिक सीमाएं हैं। पश्चिम में यमुना नदी इसे पटियाला व पूर्वी पंजाब रियासती संघ, पंजाब और दिल्ली से अलग करती है और पूर्व में बिहार से इसकी विभाजन रेखा गंगा तथा गंडक है। इतने वर्ष बीत गये और किसी ने भी इसे पूर्वी तथा पश्चिमी दो भागों में बांटने का विचार नहीं किया। इस विचार का जन्म केवल एक वर्ष पूर्व हुआ। इसके समर्थक मुट्ठी भर लोग हैं। फिर भी लढ़िया ढकिल तो रही ही है। कल्पना हवाई किलों का भी नामकरण करके उनमें आबादी बसा देती है। उस मत के अवलंबियों के तर्कों की काफी छानबीन की जानी चाहिए जो उत्तर प्रदेश का विभाजन करना चाहते हैं ।

२—विभाजनवादियों की भूल कहाँ ?

विभाजन के लिए चल रहे आन्दोलन के कुछ प्रमुख नेता चाहते हैं कि पश्चिमी उत्तर प्रदेश के १६ जिले काट कर उन्हें दिल्ली के साथ मिलाकर एक अलग राज्य बना दिया जाय। ये १६ जिले मिलकर मेरठ, आगरा और रुहेलखंड डिवीजन हैं लेकिन उन लोगों ने चार जिले खीरी, शहजहांपुर, फर्रुखाबाद और इटावा छोड़दिये हैं हालांकि ये भी पश्चिमी इलाके में ही आते हैं। यह समझना बड़ा मुश्किल है कि आखिर ये चार जिले इन लोगों ने छोड़ क्यों दिये। यह भी जान लेना अच्छा होगा कि उनकी मांग में देहरादून जिला भी शामिल है।

उनके तर्क का मूल सार यह है कि पश्चिमी जिलों को अधिक औद्योगिक विकास की आवश्यकता है। पश्चिमका हित अगर उसे उद्योग और कृषि की दृष्टि से पिछड़े पूर्वी जिलों के साथ रखा गया तो खतरे में पड़ जायगा और पश्चिमी जिलों को पूर्वी जिलों के विकास की वेदी पर बलिदान कर दिया जायगा। गत तीन पीढ़ियों में कोई नया राज्य बनाने के पक्ष में इस प्रकार की दलीलें कभी दी नहीं गयीं।

भारत में स्थित प्रायः प्रत्येक राज्य में ऐसे इलाके हैं जो भयंकर अभाव वाले क्षेत्र रहे हैं, उदाहरण के लिए आन्ध्र में रयाल सीमा। लेकिन जब आन्ध्र राज्य बनाया गया तो केन्द्र ने यह नहीं सोचा कि रयाल सीमा को अलग राज्य बना दिया जाय क्योंकि वह संयोगवश एक अभावग्रस्त दुर्भिक्ष क्षेत्र है। इसी प्रकार उत्तर प्रदेश के पूर्वी जिलोंमें बराबर अकाल की सी परिस्थिति बनी रही है और वहां की जनता को भोजन देने के लिए यहां सिचाई योजनाएं आरंभ करने की आवश्यकता पड़ी। ऐसा न करती तो सरकार को शासनारूढ़ रहने का अधिकार ही न रह जाता। यह आश्चर्य की बात नहीं है कि भारत सरकार ने भी सिचाई योजनाओं के विकास को ही सर्वोपरि प्राथमिकता दी है।

औद्योगिक विकास

राज्य पुनस्संगठन कमीशन के सामने यह शिकायत की गयी है कि गत १० वर्षों में पश्चिमी जिलों की उपेक्षा की गयी और सरकार पूर्वी जिलों के विकास पर ही पूरा ध्यान देती रही। यह सत्य इस दलील के प्रतिकूल बैठता

है। कानपुर को छोड़कर उत्तर प्रदेश के रजिस्ट्रीशुदा कारखानोंमें से आधे पश्चिमी ब्लाक के आगरा, गाजियाबाद, रामपुर, सहारनपुर, मेरठ, मोदीनगर, हाथरस, और फीरोजाबाद में हैं। अगर सरकार ने बराबर संकल्पपूर्वक पश्चिमी जिलों के औद्योगीकरण का विरोध किया होता तो औद्योगिक विकास हो ही न पाता। फिर औद्योगिक दृष्टि से विकसित पश्चिम के लिए और किसी दृष्टि से न सही तो व्यापार की दृष्टि से ही पूर्व के अपेक्षाकृत पिछड़ापन लाभप्रद साबित होगा और इस मामले में पूर्व तथा पश्चिम का एक समशील राज्य का अंग रहना स्वतः पश्चिम के लिए अधिक लाभ की बात होगी क्योंकि ऐसी हालत में दो राज्यों के बीच आने वाली व्यापारिक बाधाएं उठ खड़ी होने का सवाल ही पैदा न होता।

क्या पश्चिमी जिलों के साथ गत१० वर्षों में सचमुच सरकार ने सौतेली मां जैसा व्यवहार किया है? यह प्रश्न स्वयं ही अपना प्रतिवाद कर देता है। अगर इन जिलों के प्रति सचमुच सौतेली माता जैसा बरताव किया गया होता तो आज ये इतने प्रगतिशील और समृद्ध कैसे हो गये होते कि अपने को एक अलग राज्य बनाने की मांग पेश कर देते। इस प्रकार के प्रचार से काफी शरारत और अत्यधिक दुर्भावना होना संभव है। अतः गलतधारणाओं को निर्मूल करने के लिए उद्वेग-रहित अध्ययन की आवश्यकता है।

पंचवर्षीय योजना के मातहत किये गये खर्च के अध्ययन से ज्ञात होता है कि बजट द्वारा दी गयी कुल रकम १ अरब ३० करोड़में से पश्चिमी जिलों का भाग ३५ करोड़ अर्थात् २७ प्रति शत तक पहुंचा है। इससे इस दावे का खंडन हो जाता है कि पश्चिम को पंचवर्षीय योजना में प्रमुख निर्माण कार्यों पर होने वाले खर्च का केवल १२ प्रति शत मिला है। पंचवर्षीय योजना के मातहत खर्च के विवरण में जाने से पता चलता है कि जहां तक विद्युत्-वितरण का संबंध है कुल खर्च २२ करोड़ ६८ लाख ८० हजार में से पश्चिम को मिलता है १० करोड़ ३७ लाख ३४ हजार यानी ४६ प्रतिशत और कुल १,२८,७९५ किलोवाट विद्युत शक्ति में से पश्चिम को ५२,७०० किलोवाट यानी ४१ प्रतिशत मिली है। इस प्रकार इस कथन में कतई सार नहीं है कि कुल विद्युतशक्ति ६५.१ हजार किलोवाट में केवल १५ हजार किलोवाट और कुल व्यय २१ करोड़ ४० लाख में से केवल ४ करोड़ ९२ लाख अर्थात् चौथाई से कम हिस्सा पश्चिमी जिलों को मिलता है।

विद्युत योजनाएं

सन् ४६ से ५६ तक विद्युत निर्माण योजनाओं के सिलसिले में पूर्वी जिलों

पर खर्च का तखमीना १९ करोड़ ४७ लाख होगी और पश्चिमी जिलों पर १६ करोड़ ७३ लाख खर्च होगा लेकिन वित्तीय वर्ष सन् ५५-५६ के अन्त तक पश्चिम को ६॥ हजार मील विद्युत प्रसारण लाइनें मिल जायेंगी जब कि उस समय तक मध्य उत्तर प्रदेश के भाग में १८०० मील और पूर्वी उत्तर प्रदेश के नसीब में केवल २ हजार मील लम्बी लाइनें होंगी। उस समय तक राज्य के ६१३ कस्बों में बिजली पहुँच चुकी होगी जनमें से ४७३ पश्चिमी जिलों में पड़ते हैं।

सड़क यातायात

उत्तर प्रदेशीय रोडवेज में कुल ४ करोड़ ३० लाख रुपये की पूंजी लगी है जिसमें से २ करोड़ ७ लाख पश्चिमी इलाके में सड़कों के यातयात का सुधार करने के लिए ८८ लाख पूर्वी इलाके में और १ करोड़ ६ लाख मध्य वर्ती क्षेत्र में खर्च करने की योजना है। रोडवेज के पास कुल १६४४ बसें हैं जिनमें से ७८६ पश्चिमी जिलों में चलती हैं। सड़कों के सबंध में भी यह बात उल्लेखनीय है कि सन् ४५-४६ में कुल पक्की सड़कों की ३३ प्रतिशत पश्चिमी जिलों में थीं और सन् ५६ तक की योजना पूरी होने के बाद पश्चिमी जिलों में पक्की सड़कें मीलों में लम्बाई के हिसाब से पूरे उत्तर प्रदेश की २९ प्रतिशत होंगी।

चिकित्सा

अन्य जिलों के मुकाबले में उत्तर प्रदेश का चिकित्सा बजट जनसंख्या देखते हुए बहुत ही कम है हालांकि यह राज्य भारतीय संघ का सबसे बड़ा राज्य है। खर्च प्रति व्यक्ति करीब १ आ० से कुछ ऊपर बैठता है। पश्चिमी बंगाल सरकार उत्तर प्रदेश को अपेक्षा चिकित्सा पर करीब चौगुना व्यय करती है। इस दिशा में भी पश्चिमी जिलों के प्रति न्यायपूर्ण और कुछ लोग कह सकते हैं कि उदारतापूर्ण बरताव हुआ है। सन् ४६-५६ में चिकित्सा सेवाओं पर होने वाले कुल व्यय १९ करोड़ ७६ लाख में पश्चिमी जिलों को ६ करोड़ ६४ लाख मिला जबकि पूर्वी जिलों को केवल ३ करोड़ ७३ लाख मिला है। पूर्वी जिलों को वस्तुतः यह शिकायत हो सकती है कि उनके निरन्तर अभाव, अकाल और रोग के क्षेत्र में काफी रुपया क्यों नहीं खर्च किया जाता। जन-स्वास्थ्य की मद में कुल ६ करोड़ ३९ लाख से पूर्व को १ करोड़ ३५ लाख और पश्चिम को १ करोड़ १४ लाख मिला। पूर्वी इलाके का व्यय वहां की लाभान्वित होने वाली जनसंख्या और स्वास्थ्य की गिरी हालत देखते हुए गैर मुनासिब नहीं कहा जा सकता।

शिक्षा

पूर्वी जिले शिक्षा की दृष्टि से किस कदर पिछड़े हैं यह सबको मालूम है। यह स्वाभाविक है कि कोई भी सरकार जो हृदय से जन-कल्याण करने को इच्छुक हो निरक्षरता के मूलोच्छेद के लिए उदारतापूर्वक धन व्यय करेगी। सन् ४६ से ५६ तक शिक्षा के लिए कुल ५० करोड़ ९४ लाख रकम रक्खी गयी है जिसमें से पूर्व को १७ करोड़ ३२ लाख और पश्चिम को १४ करोड़ ४० लाख मिलेंगे। दोनों क्षेत्रों की अलग-अलग जनसंख्या और पूर्वी इलाके के पिछड़ेपन की सीमा पर विचार करके के बाद किसी तरह से भी पूर्वी जिलों को मिलने वाला यह अंश अधिक नहीं कहा जा सकता।

उद्योग

चीनी उद्योग जो उत्तर प्रदेश का प्रमुख उद्योग माना जाता है पूर्व और पश्चिम में समान रूप से फैला हुआ है। युद्ध के बाद केवल दो कपड़ा मिलें खुलीं। एक मोदी नगर में और दूसरी सहारनपुर में। दोनों पश्चिमी क्षेत्र में हैं। शीघ्र ही एक बड़ी चीनी मिल रुड़कीमें खुलने वाली है और वह भी पश्चिमी जिलोंमें ही होगी। उत्तर प्रदेश खनिज संपत्ति की दृष्टि से खास तौर पर अभागा और गरीब प्रदेश है। सिर्फ मिर्जापुर जिले में ही सीमेंट बनाने के लिए उपयोगी कच्चा माल लाइमस्टोन (चूने का पत्थर) मिलता है। इसी कारण राजकीय सीमेंट फैक्टरी इसी जिले में स्थापित करनी पड़ी। इस फैक्टरी में उत्पादन प्रारंभ हो गया है और निकट भविष्य में यह पूरे राज्य की जरूरत भर को कुल सीमेंट देने में समर्थ हो जायगी। पश्चिम को औद्योगिक दृष्टि से अधिक विकसित होने के नाते इस फैक्टरी में तैयार होने वाली सीमेंट की पूर्वी जिलों की अपेक्षा अधिक आवश्यकता पड़ेगी।

चाहे किसी दृष्टिकोण से देखा जाय ऐसा एक भी दृष्टान्त खोज निकालना कठिन है जिसमें पश्चिम या पूर्व किसी के विरुद्ध विकास कार्यों के सिलसिले में पक्षपात किया गया हो। इसका कारण था। कारण यह था, इन तमाम वर्षों में राज्य को एक अविच्छिन्न इकाई मानकर उसका विकास किया गया और सभी योजनाएं इसी सिद्धांत को आधार मानकर तैयार की गयी।

३—विभाजन की मांग निराधार

संकलित

राज्य पुनस्संगठन कमीशन को उत्तर प्रदेश के विभाजन के समर्थन में दिये गये स्मृतिपत्र में एक भोलापन है जो काफी गंभीर है और वह प्रश्न अत्यन्त महत्वपूर्ण है। स्मृति-पत्र ने जहां १६ जिलों को उत्तर प्रदेश से अलग छांट कर और उन्हें दिल्ली से मिला कर एक नया राज्य बनाने की मांग की है वहां बड़ी नरमी से यह भी संकेत कर दिया गया है कि अगर कमीशन पसन्द करे तो कुमाऊं डिवीजन भी पश्चिमी राज्य में जोड़ दिया जाय। यह एक अजीब तर्क है। इसमें संदेह नहीं कि कुमाऊं डिवीजन भी पश्चिम में है। कुमाऊं के बिना पश्चिम को एक अलग राज्य बनाने की कल्पना भी नहीं की जा सकती। लेकिन आन्दोलन के अखाड़े के पहलवान शायद इसे प्रस्तावित राज्य में शामिल नहीं करना चाहते क्योंकि यह क्षेत्र विकसित नहीं है और इसे आगे बढ़े हुए पश्चिमी जिलों के मुकाबले की सतह तक लाने के लिए भारी पूंजी लगानी पड़ेगी। इसलिए उन्होंने इस प्रश्न को कमीशन द्वारा निर्णय किये जाने के लिए छोड़ दिया है।

प्रस्तावित नया राज्य स्मृति पत्र के अनुसार खीरी, शाहजहांपुर, फर्रुखाबाद और इटावा जिलों को अवशिष्ट उत्तर प्रदेश में ही छोड़ दे रहा है हालांकि स्पष्ट रूप से ये भी पश्चिमी इलाके में ही आते हैं। संभवतः विचार यह है कि थोड़े से विकसित और आगे बढ़े हुए जिलों का एक गुट बना कर उसे एक नया राज्य कह दिया जाय। यह बात प्रत्यक्ष रूप से उन मौलिक सिद्धांतों के प्रतिकूल हैं जिनके आधार पर कोई राज्य बनता है। अगर इस तर्क को मान लिया जाता है तो दो किस्म के राज्य बन जायेंगे, कुछ एकदम प्रगतिशील और कुछ एकदम पिछड़े राज्य।

अगर समशीलत्व या एकरूपता ही प्रमुख मापदंड है—चाहे वह भाषा संबंधी हो या संस्कृति अथवा परम्परा संबंधी-तो वर्तमान उत्तर प्रदेश राज्य के विभाजन का ख्याल किसी प्रकार भी न्यायसंगत नहीं सिद्ध किया जा सकता। अन्तिम जन गणना के हिसाब से इस राज्य की जनता में मूल भाषा हिन्दी बोलने वालों की संख्या पूरी जनसंख्या की ९७·३ प्रतिशत है और उन पश्चिमी जिलों में जो काट कर अलग राज्य बनाने के लिए चुने गये हैं ९७ प्रति शत लोग हिन्दी

बोलते हैं। पूर्व और पश्चिम की बोली में थोड़ा-बहुत अन्तर हो सकता है। भाषा में इस तरह का प्रादेशिक अन्तर तो संसार भर में है। जिस मराठे का जन्म और पालन-पोषण बम्बई में हुआ हो उसे बम्बई राज्य के दक्षिणी छोर पर स्थित बेलगाम अथवा कन्नड़ जिलों में बोली जाने वाली मराठी समझने में कठिनाई पड़ेगी। ऐसा अन्तर तो पश्चिमी जिलों में भी मिल सकता है। विविध प्रदेशों और अन्य भाषाओं से सम्पर्क होने पर हर जीवित भाषा में कुछ न कुछ परिवर्तन होना अवश्यम्भावी है। दृढ़ अपरिवर्तनशील और सदा एक रूप में तो केवल मृत भाषा ही रह सकती है। यह ऊपरी अन्तर ऐसी बात नहीं है कि इसे बढ़ा-चढ़ा कर दिखाया जाय। लेकिन राज्य पुनस्संगठन कमीशन को दिये गये स्मृति-पत्र ने इसी को बड़ी हद तक अतिरंजित करके उत्तर प्रदेश को अनमेल राज्य कह डाला है। अगर बहस के लिए मान भी लिया जाय कि राज्यमें अनमेल तत्व हैं तो उनका बेमेलपन विभाजन के बाद भी बना रहना अनिवार्य है ।

ब्रज क्षेत्रों में जिसमें मथुरा, आगरा, मैनपुरी एटा आदि आते हैं, एक भिन्न बोली है और इस क्षेत्र के रहने वालों को मेरठ में बोली जाने वाली उपभाषा समझने में बड़ी कठिनाई होती है। अगर इस आधार पर एक नया राज्य बनाया जाता है तो ब्रजभूमि के लिए भी अलग राज्य की मांग मानने से इंकार नहीं किया जा सकता और इस प्रकार देश के भविष्य में और भी विभाजन होंगे तथा इसका कहीं अन्त न होगा।

वित्तीय विचार

क्या प्रस्तावित नया राज्य वित्तीय दृष्टि से आत्मनिर्भर होगा ? १६ पश्चिमी जिलों का क्षेत्रफल ३० हजार वर्गमील और आबादी २ करोड़ ७ लाख है। पश्चिमी बंगाल का रकबा ३१ हजार वर्गमील और जनसंख्या प्राय: २ करोड़ ४८ लाख है। यद्यपि मध्य भारत का क्षेत्रफल १ लाख ३० हजार वर्गमील है पर जनसंख्या केवल १ करोड़ १२ लाख है। हम तुलनात्मक अध्ययन के लिए इन दो राज्यों को ले सकते हैं। इन दोनों राज्यों में नागरिक प्रशासन की लागत विकास छोड़ कर कुल व्यय की एक-चौथाई से कुछ अधिक बैठती है और विकास कार्यों पर इन राज्यों में कुल व्यय के आधे से कुछ कम खर्च किया जाता है। इसके मुकाबले उत्तर प्रदेश में नागरिक प्रशासन व्यय कुल व्यय का केवल पंचमांश है और इसके बाद तुलनात्मक दृष्टि से यह राज्य अपने समानस्थिति वाले किसी भी राज्य के मुकाबले विकास योजनाओं पर कहीं अधिक रकम लगाने में समर्थ है। और कर-भार भी कई दृष्टियों से यहां न्यूनतम है।

इसमें शक है कि प्रस्तावित नया राज्य विकास की मद पर उतना भी खर्च कर सकेगा जितना इस समय उत्तर प्रदेश सरकार पश्चिमी जिलों पर खर्च कर रही है। उत्तर प्रदेश सरकार अपने नागरिक प्रशासन की लागत केवल अपने बड़े आधार के कारण ही कम से कम स्तर पर रखने में सफल हुई है। विभाजन के अगुआ लोगों को ऊपर से जो लाभ दिखायी दे रहे हैं वे एक नये राज्य के लिए आवश्यक साजोसामान और प्रशासन जुटाने में ही समाप्त हो सकते हैं। यह असंभव नहीं है कि नये राज्य की सरकारके हाथोंमें और राज्यों की स्थापना हो गयी तो सभी प्रशासकीय और रस्मी खर्चों को निपटाने के बाद विकास कार्यों में लगाने के लिए बहुत ही कम धन बचे।

अन्य बातें

भावावेश या अन्य सिद्धांतों की बात छोड़ भी दी जाय तो भी उत्तर प्रदेश की भौगोलिक स्थिति के कारण अगर राज्य को पूर्व पश्चिम के आधार पर दो भागों में बांटने की कोशिश की गयी तो असंख्य पेचीदगियां सामने आयेंगी। पूरे राज्य में सिंचाई साधनों का विकास इसे एक आर्थिक इकाई मान कर किया गया है। एक शताब्दी पुरानी गंगा नहर का उद्‌गम हरिद्वार में है पर उसका प्रसार कानपुर तक है। शारदा नहर पीलीभीत से आरंभ होकर जौनपुर और प्रतापगढ़ तक जाती है। विभाजन होने पर नहर के पानी और राज्य की निधियों के बटवारे के प्रश्नों को लेकर ऐसे विवाद आरंभ होंगे जो कभी समाप्त नहीं हो सकते और उनके कारण काफी कटुता तथा दुर्भावना भी बढ़ेगी।

विशालता एक गुण है। कितना बड़ा और कितना महान् होना उचित है इसकी कोई सीमा नहीं तय कर सकता। उत्तर प्रदेश की विशालता ने इसकी संस्कृति और परम्परा की एकरूपता द्वारा उपार्जित शक्ति में चार चांद लगा दिये हैं।

इस प्रकार उत्तर प्रदेश सांस्कृतिक, आर्थिक, एवं भौगोलिक दृष्टि से एक अविभाज्य इकाई है और उसके विभाजन का रत्ती भर औचित्य नहीं है। इन लेखों में प्रस्तुत तथ्यों और आंकड़ों से सिद्ध होता है कि स्मृति-पत्र में, जो ज्ञात हुआ है कि राज्य पुनस्संगठन कमीशन के पास भेजा गया है, यह शिकायत एकदम तत्वहीन है कि पश्चिमी जिलों को सरकार की विकास योजनाओं में उचित भाग नहीं मिला है। संभवतः बाद में सत्य समझ में आ जाना ही इस बात का कारण है जो लोग स्मृति-पत्र पर हस्ताक्षर करने वाले बताये जाते थे उनमें से अधिकांश लोगों को सुझाये हुए रास्ते पर चलने की बुद्धिमता पर संदेह हो गया

हैं और समस्या पर बिना आवेश एवं उद्वेग, विचार करने के अनन्तर उन्होंने स्मृति-पत्र से अपना नाता तोड़ लिया है ।

दंभ, दर्प और दुर्भावना के सामने तर्क काम नहीं देता । लेकिन अगर विभाजन के नये खुले समर्थक भी विचारपूर्ण दृष्टिकोण से देखें तो उन्हें स्वयं भी अपनी वर्तमान दिशा की खतरनाक निरर्थकता का पता चल सकता है और वे देर से ही सही अब भी सम्मानपूर्वक गलत रास्ते का परित्याग कर सकते हैं ।

विभाजित उत्तरप्रदेश

लेखक——डा. राधाकमल मुकर्जी उपकुलपति, लखनऊ विश्वविद्यालय

१. उत्तर प्रदेश जैसे एक विस्तृत राज्य ने अपने व्यापक क्षेत्र, साधनों तथा तथा जनसंख्या के बल पर भारतीय संघ की दृढ़ता, सुरक्षा और शक्ति को बनाये रखने में सदा से योग दिया है। अतएव इसे पश्चिमी उत्तर प्रदेश और पूर्वी उत्तर प्रदेश में विभाजित करके सम्पूर्ण देश की सुदृढ़ता, सुरक्षा और शक्ति को नष्ट न होने देना चाहिए।

२. कृषि, सिंचाई, जलविद्युत तथा बड़े पैमाने के उद्योगों के विकास के लिए यहां पर्याप्त साधन हैं किन्तु द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अधीन इन विकास कार्यों के लिए अविभाजित राज्य के वित्तीय साधनों की ही आवश्यकता है। कुछ योजनाएं प्रगतिपथ पर हैंऔर उन्हें प्रादेशिकता और क्षेत्रीयता की संकीर्ण भावनाओं से——जिनमें विच्छिन्नता की प्रवृत्तियां भी शामिल हैं——अवरुद्ध न होने देना चाहिए।

३. इस राज्य की पुरातन ऐतिहासिक परम्पराएं हैं। भारतवर्ष का यह मध्य देश अनेक आक्रमणों के होते हुए भी भाषा, संस्कृति, रीति-रिवाज और रहन-सहन के तरीकों में जो एकरूपता कायम रख सका है वह अद्वितीय है। राज्य के पूर्व और पश्चिम में जातियों का जो वर्गीकरण पाया जाता है वह प्रायः एक सा ही है। यहां के निवासियों की भाषा या तो हिन्दी है अथवा हिन्दुस्तानी। पश्चिमी जिलों के लोगों की पूर्वी जिलों में शादी-विवाह करने का रिवाज इस बात का द्योतक है कि कि यहां संस्कृति की एकरूपता रही है। यह एकरूपता कृषि विकास के लिए वरदान सिद्ध हुई है। यही एकरूपता आगे चलकर द्वितीय पंचवर्षीय योजना के कार्यक्रम तथा नीति को कार्यान्वित करने में काफी महत्व-पूर्ण सिद्ध होगी।

कम खर्च

४. इस राज्य के आकार और एकरूपता के कारण ही यहां के प्रशासकीय व्यय में अपेक्षाकृत कमी हो सकी है। उत्तर प्रदेश के जन-प्रशासन संबंधी व्यय का प्रतिशत भारतवर्ष में सबसे कम अर्थात् २१·३ है जब कि पंजाब में यह

२६.५ और बंबई में २९.० है। प्रशासकीय व्यय में कमी होना राज्य के राष्ट्रीय समाज सेवा कर्मों के विकास के हित में है।

५. सम्पूर्ण राज्य की जलवायु और सिंचाई व्यवस्था के कारण ही पूर्वी और पश्चिमी जिलों में क्रमशः धान और गेहूँ की व्यापक खेती होती रही है। अन्नोत्पादन में इस प्रकार की भिन्नता से उत्तर प्रदेश को यह लाभ रहा है कि पूर्वी जिलों तथा आगरा-मथुरा के इलाकों में सूखा, दुर्भिक्ष अथवा बाढ़ से जो हानि होती है उसकी पूर्ति हो सकती है।

उत्तर प्रदेश की आर्थिक सुदृढ़ता भी यहां के क्षेत्रों में भिन्न-भिन्न प्रकार की खेती और सिंचाई के विभिन्न साधनों पर निर्भर करती है क्योंकि ये एक दूसरे के पूरक हैं।

६. पश्चिमी उत्तर प्रदेश आज इतना समृद्धशाली गेहूँ उत्पादक क्षेत्र न होता बल्कि मध्य प्रदेश की तरह यहां केवल मोटे अनाज की ही उपज होती यदि यहां पर गंगा-यमुना नहर प्रणालियां जैसी महत्वपूर्ण सिंचाई-साधनों का आविर्भाव न हुआ होता जो संसार के सर्वोत्तम सिंचाई साधनों में से एक है। १९ वीं शताब्दी के मध्य से इस सिंचाई प्रणाली के निर्माण पर अपार धनराशि व्यय की जा रही है और हाल में पश्चिमी उत्तर प्रदेश में विद्युत विकास योजनाएं भी लागू की गयी हैं जिससे राज्य का यह भाग और भी समृद्धशाली हो गया है। कृषि, सुरक्षा और समृद्धि के साथ-साथ यह भाग अनावृष्टि और दुर्भिक्ष के कुप्रभावों से मुक्त है, और इसका कारण यही है कि एक दूसरे के लाभ के लिए दोनों क्षेत्रों के साधनों का उपयोग किया जाता रहा है। अतः उत्तर प्रदेश के विभाजन की मांग करना अनुचित ही नहीं असंगत भी है। क्योंकि वह धनराशि जो पश्चिमी उत्तर प्रदेश के विकास पर खर्च की गयी यदि पूर्वी जिलों के, जहां पर्याप्त वर्षा होती है और कुंओं द्वारा सिंचाई की व्यवस्था भी है, सिंचाई और जल-विद्युत विकास पर की जाती तो पश्चिमी जिलों की अपेक्षा ये जिले अधिक सम्पन्न हो जाते।

७. गंगा-यमुना जैसे मैदान में कृषि, सिंचाई तथा बिजली विकास की योजनाएं पूरे प्रदेश को एक इकाई के रूप में मानकर बनायी एवं कार्यान्वित की जानी ही लाभकर है। गंगानहर हरद्वार से आरंभ होती है और इसकी शाखाएं पूर्व में कानपुर और इटावा तक फैली हुई हैं। शारदा नहर प्रणाली का विस्तार पीलीभीत से प्रतापगढ़ और पूर्व में जौनपुर तक है। सिंचाई वाले क्षेत्रों के संबंध में नदियों के प्रवाह की अनुकूल तथा प्रतिकूल दिशाएं और नहर क्षेत्र ही संघर्ष

के कारण होते हैं। चनाब, रावी और झेलम की सिंचाई प्रणालियों से भारत और पाकिस्तान दोनों ही देशों की सिंचाई संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति होती है और इन्ही के कारण इन देशों ने सिंचाई संबंधी जो पारस्परिक विरोधी दावे प्रस्तुत किये हैं उनसे उनके संबंध कटु हुए हैं। यदि उ० प्र० भी विभाजित कर दिया जाय तो इस प्रकार की कटुता अनिवार्य होगी।

८. गंगा के मैदान में सहारनपुर से लेकर बनारस तक कृषि की सुदृढ़ व्यवस्था करने तथा सिवालिक और कुमाऊं गढ़वाल, हिमालय में वन लगाने तथा भू-क्षरणें को रोकने के लिए पर्याप्त धन व्यय करना होगा। पूर्व तथा पश्चिमी उत्तर प्रदेश के आर्थिक हित एक से हैं और यदि प्रदेश का विभाजन हुआ तो इससे सभी को हानि और गहरी क्षति पहुँचेगी। कृषि, सिंचाई तथा विद्युत विकास की दृष्टि से नदी की घाटी एक समष्टि इकाई के रूप में होती है, इसमें पूर्व और पश्चिम जैसी कोई चीज नहीं होती।

९. पश्चिमी उत्तर प्रदेश वालों की यह धारणा है कि विभाजन से उनके यहां औद्योगीकरण को सहायता मिलेगी। औसतन जोत बड़ी होने तथा ग्रामीण क्षेत्रों में पूंजी के इकट्ठा हो जाने के कारण खेती-बाड़ी से इतर व्यवसाय जैसे वाणिज्य तथा यातायात पर ही पश्चिमी उत्तर प्रदेश की ३८ प्रति शत जनता का निर्वाह होता है जब कि सम्पूर्ण राज्य में २६ प्रति शत जनता इन व्यवसायों पर निर्भर रहती है। बिजनौर, मेरठ, सहारनपुर और मुजफ्फरनगर की क्रमशः १८, १७, १५ और १४ प्रति शत जनता कृषि से इतर अन्य प्रकार के उत्पादन कार्यों में लगी हुई है जब कि उत्तर प्रदेश की केवल ९ प्रतिशत जनसंख्या ही इन कार्यों में रत है। पश्चिमी उत्तर में जल विद्युत औद्योगिक केन्द्रों की अनेक शाखाएं होने के कारण इन केन्द्रों के समीपवर्ती नगर तथा ग्रामीण एवं शहरी बस्तियां जहां मशीनों का उपयोग किया जाता है तेजी से बढ़ रही है।

भावी उत्तर प्रदेश के औद्योगिक नकशे में रामपुर, मोदीनगर, गाजियाबाद, सहारनपुर, मेरठ रुड़की, हाथरस और फिरोजाबाद का स्थान प्रमुख होगा। किन्तु पश्चिमी उत्तर प्रदेश का औद्योगीकरण अविभाजित उत्तर प्रदेश में तेजी से विकास कर सकता है क्योंकि वहां के विकास के लिए आर्थिक एवं अन्य प्रकार की सहायता अविभाजित उत्तर प्रदेश में ही मिल सकती हैं। सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश के ४८६ नगरों में से पश्चिमी उत्तर प्रदेश के ३७० नगरों में बिजली की व्यवस्था है। केवल बिजली लग जाने से ही पश्चिमी उत्तर प्रदेश औद्योगिक प्रगति नहीं कर सकता। इसके लिए राज्य सरकार की उदारतापूर्ण सहायता, क्रय-विक्रय के

लिए उपयुक्त मंडियां तथा राज्य की अधिकांश जनसंख्या की क्रयशक्ति का होना अपेक्षित है ।

१०. पश्चिमी उत्तर प्रदेश राज्य भारत के सबसे छोटे राज्यों में एक होगा, यहां तक कि इसका आकार पश्चिमी बंगाल से भी छोटा होगा, जहां आर्थिक स्थिति अधिक सुदृढ़ नहीं रह सकेगी । इसके अतिरिक्त कृषि की दृष्टि से विपन्न आगरा मथुरा क्षेत्रभी इस क्षेत्रमें सम्मिलित हो जानेसे उत्तर प्रदेश की प्रगतिमें काफी बाधा पड़ेगी। राजपूताना रेगिस्तान की बाढ़ भी एक महत्वपूर्ण समस्या है । यह रेगिस्तान गंगा की घाटी में फैल रहा है और विगत अर्ध शताब्दी में आधे मील प्रति वर्ष के हिसाब से इस क्षेत्र को अपने शिकंजों में ले रहा है, इस प्रकार प्रति वर्ष ५० वर्ग मील की उपजाऊ भूमि नष्ट हो जाती है । इस क्षेत्र में शनैः-शनैः जो रेगिस्तान फैल रहा है उसे रोकने के लिए दिल्ली से लेकर इटावा तक वन की पट्टियां स्थापित करने के लिए वृक्षारोपण की वृहत् योजनाओं की आवश्यकता है । इस प्रकार की योजनाओं को कार्यान्वित करने में पर्याप्त धन व्यय करना होगा, जो केवल संयुक्त उत्तर प्रदेश ही कर सकेगा, न कि छोटा राज्य इस कार्य के लिए समर्थ है । विभाजन से न केवल उत्तर प्रदेश अधिक निर्धन एवं दुर्बल हो जायगा, अपितु पश्चिमी उत्तर प्रदेश का भी कोई भला नहीं होगा और आगरा मथुरा क्षेत्र को जिसे पश्चिमी उत्तर प्रदेश राज्य में सम्मिलित करने का प्रयत्न किया जा रहा है, अत्यधिक क्षति पहुँचेगी।

११. संघीय राज्य की शक्ति एवं एकता की सुरक्षा का मूल सिद्धांत है कि शक्तिशाली एवं दुर्बल और समृद्ध एवं निर्धन क्षेत्रों को साथ-साथ रक्खा जाय । इतिहास तो इसका साक्षी है कि पश्चिमी उत्तर प्रदेश की अपेक्षाकृत अधिक उन्नति एवं समृद्धि सम्पूर्ण राज्य के त्याग तथा बलिदान का फल है और अब इस क्षेत्र की उन्नति में तेजी लाने का बहाना लेकर इस राज्य का विभाजन करने की मांग करना न केवल स्वार्थपूर्ण है वरन् आत्मप्रवंचन भी है। इस प्रकार की मांग के पीछे फूट डालनेवाली कुछ शक्तियों का हाथ है, और यदि उन्हें न रोका गया तो इस गणराज्य की प्रगति अवरुद्ध हो जायगी और इसकी सुदृढ़ता भी नष्ट हो जायगी ।

पायनियर प्रेस, लखनऊ---३०७